बढ़ते मानसिक रोगी और बेखबर समाज

मनोरोगियों को समाज का अपनापन और सहयोग चाहिए। विश्व सिजोफ्रेनिया दिवस पर विशेषः

संजय गुप्ता
अध्यक्ष, मनोचिकित्सा विभाग
बीएचयू

सिजोफ्रेनिया को कुछ लोग भूत-प्रेत का असर मान लेते हैं या इसे पागलपन करार दे दिया जाता है। इसे एक अभिशाप मान लिया जाता है। इससे पीड़ित व्यक्ति को समाज का तिरस्कार झेलना पड़ता है, जबकि सिजोफ्रेनिया तमाम बीमारियों की तरह एक रोग है और इसका उपचार मरीज को तिरस्कृत कर नहीं, बल्कि उसे अपनाकर किया जा सकता है।

जब भी हम किसी व्यक्ति को अपने पर बुदबुदाते, हवा में निरर्थक इशारे करते, अकारण ही लोगों पर संदेह करके गुस्सा करते या हमला करते देखते हैं, तो इसे पागलपन का लक्षण मान लेते हैं या फिर इसे प्रेतबाधा घोषित कर दिया जाता है। और फिर उस व्यक्ति को आजीवन पागलपन के लेबल के साथ जीना पड़ता है। दुख और चिंता का विषय यह है कि जो व्यक्ति समुचित इलाज से पूरी तरह ठीक हो सार्थक जीवन जीते हुए परिवार और समाज में योगदान दे सकता है, वह तकलीफदेह जीवन जीने को मजबूर है। साथ ही, उससे जुड़े लोग भी आजीवन उसकी पीड़ा भोगने को विवश रहते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के विश्व मानसिक स्वास्थ्य कार्य-योजना के क्रम में भारतीय मनोचिकित्सा तंत्र के सामुदायिक विशेषज्ञता विभाग ने 'हैप्पी इंडिया' नाम से एक अभियान की शुरुआत की है। 15 मई को बीएचयू से शुरू हुए इस देशव्यापी अभियान का मकसद समाज को खुशहाल बनाना है। बहरहाल, गौर करने लायक एक तथ्य यह है कि देश में इस वक्त केवल 4,000 मानसिक स्वास्थ्य विशेषज्ञ मौजूद हैं, जो समाज की आवश्यकता को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है। इसलिए 'हैप्पी इंडिया' नया प्रयोग करने जा रहा है। इसमें समाज के बीच से ही लोगों को चुना गया है, जिनका कार्य रोग की पहचान करना व जागरूकता फैलाना ही नहीं, समुदाय व मानसिक रोग विशेषज्ञ के बीच सेतु की भूमिका निभाना भी है, ताकि लोगों का आसानी से विशेषज्ञ से संपर्क हो सके।

सिजोफ्रेनिया के शिकार अधिकतर लोगों को उनके परिजन प्रेतबाधा का शिकार मान उन्हें किसी ओझा, मजार या मंदिर में ले जाते हैं। ऐसे में, समय बीतने के साथ ही मरीज की स्थिति बिगड़ती चली जाती है। वास्तविकता यह है कि इसके शिकार शख्स के दिमाग में 'डोपामीन' नामक तत्व की मात्रा बढ़ जाती है। इसी तत्व से मानव का व्यवहार व क्रियाएं नियंत्रित होती हैं। इसमें जब असंतुलन हो जाता है, तो मानव-व्यवहार बदल जाता है। आज कई सारी बेहतर दवाएं उपलब्ध हैं, जिनके इस्तेमाल से इसे ठीक किया जा सकता है।

इस रोग के शिकार लोगों को समाज के सहयोग की जरूरत है। उन्हें उसकी उपेक्षा नहीं, बल्कि अपनापन चाहिए। यह जिम्मेदारी आखिरकार समाज की है कि वह अपनी हर इकाई का ख्याल रखे। सेहतमंद देश की परिकल्पना स्वस्थ समाज और निरोग परिवार पर ही आधारित है। इसमें हम अपनी जिम्मेदारी को नजरअंदाज नहीं कर सकते।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)